बुद्धवर्ष २५४५, पौष पूर्णिमा, २८ जनवरी, २००२ वर्ष ३१ अंक ८

धम्मवाणी

असाहसेन धम्मेन, समेन नयती परे।
धम्मस्स गुत्तो मेधावी, "धम्मट्ठो"ति पवुच्चति॥

धम्मपद- २५७

जो (व्यक्ति) धीरज के साथ, धर्मपूर्वक, निष्पक्ष होकर दूसरों का मार्गदर्शन करता है, वह धर्मरक्षक मेधावी 'धर्मिष्ठ' कहा जाता है।

भाभीमां की सहनशीलता

अतीत की कुछएक सुखद यादें मानस के पन्नों में छायी हुई हैं। उन्हें लिखने को मन विवश हो रहा है। विशेष कर भाभीमां से संबंधित यादें, जिनके बारे में साधकों को बहुत अल्प जानकारी है। भैया सत्यनारायण जो अब मेरे गुरुदेव हैं और भाभीमां इलायचीदेवी का परिणय संबंध कब कैसे हुआ? भाभीमां गोयन्का परिवार की एक सदस्या बन कर कैसे अपने गृहस्थजीवन की जिम्मेदारी को निभाते हुए अब किस प्रकार एक आदर्श धर्ममय जीवन निभा रही हैं, इसका थोड़ा-बहुत विवरण सभी जानना चाहते हैं।

पूज्य बड़े भैया सत्यनारायण तथा पूज्या भाभी इलायचीदेवी का जन्म स्वर्णभूमि म्यंमा के प्रमुख नगर मांडले में हुआ, जो कि ब्रिटिश शासन के पूर्व बर्मी राजा की राजधानी थी। पूज्य भाभीमां के माता-पिता का घर हमारे घर से बिल्कुल सटा हुआ था। दोनों परिवारों में बहुत ही सानिध्य तथा भाईचारा एवं मेलजोल था। बड़े भैया बालकृष्ण और भाभीमां के पिता श्री बालचंद माखरिया बहुत ही घनिष्ट मित्र थे। एक-दूसरे के सुख-दुःख के साथी थे।

बालचंदजी बहुत मिलनसार और मधुर स्वभाव के थे। समाज में उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी, सम्मान था। धन संपत्ति से भरापूरा सुखी परिवार था। सादा रहन-सहन, कोई दिखावा नहीं, बहुत ही सात्विक जीवन था। बालचंदजी का छोटा-सा परिवार था, उनकी पहली संतान, उनकी सुपुत्री इलायचीदेवी अपने माता-पिता की प्यारी-दुलारी लाडली बेटी थी। बालचंदजी अपनी बेटी को स्कूल की पढ़ाई के साथ-साथ घर में धार्मिक शिक्षा भी दिया करते थे। उन्होंने पूज्य पिताश्री के पास उनके तीसरे पुत्र सत्यनारायण के साथ अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव रखा। पिताश्री ने अपने अग्रज भ्राताओं से सलाह मशविरा करके अपनी सम्मति दे दी। इस संबंध को पुष्ट करने में सबसे बड़े भैया बालकृष्ण का भी हाथ था। वे बर्मा के सुदूर उत्तर में बर्मा-चीन की सीमा पर बसे मचीना नगर में रहते थे। वे भी मांडले आ गए और सारे परिवार को इस संबंध के लिए राजी कर लिया। दोनों परिवार रिश्ते में जुड़ गए। इससे दोनों परिवारों का आपसी स्नेह तथा आत्मीयता और घनिष्ट हो गई। १९४२ में जबकि दूसरे विश्व युद्ध की लपटें बर्मा भी पहुँच गई थीं, उसी समय दोनों का परिणय संस्कार संपन्न हुआ। दो सप्ताह के भीतर जब युद्ध के बादल मांडले पर मँडराने लगे, तब दोनों परिवार सीमावर्ती पहाड़ों के बीहड़ रास्ते को पैदल पार करते हुए भारत पहुँचे। राजस्थान में दोनों परिवार अपने-अपने पुरुखों की भूमि में जा बसे। हमने चूरू में बड़ों की बनाई हवेली में शरण ली। यहीं पर भैया सत्यनारायण और भाभीमां का दाम्पत्य जीवन आरंभ हुआ। पूज्य माताश्री और पिताश्री अपने सबसे बड़े पुत्र बालकृष्ण को अपने अग्रज भ्राता श्री रामेश्वरजी, जो कि निस्संतान थे, को गोद दे दिया था और पूज्य भैया सत्यनारायण को अपने अग्रज श्री द्वारकादासजी को गोद दे दिया था। जापानी युद्ध आरंभ होने के पूर्व ताऊजी श्री द्वारकादासजी का शरीर शांत हो गया था। भाभीमां जब ससुराल आई तो अपनी दोनों सास और ससुर की सेवा तन-मन से करती रही। विनम्र सेवाभाव और मधुर वाणीयुक्त मृदु स्वभाव से उसने सबका मन मोह लिया और प्यारी लाडली बहूरानी बन कर परिवार में रच बस गई। पूज्य भैया सत्यनारायण और भाभीमां का गठबंधन न जाने कितने जन्मों से चला आ रहा होगा। वह सही रूप में उनकी सहधर्मिणी बन कर उनसे पूर्णतया घुलमिल गई। अवश्य ये दोनों अनेक जन्मों में साथ-साथ तपे होंगे, साथ-साथ अपरिमित पारमिताओं का संचय संग्रह किया होगा। एक छोटे से परिवार में जन्मी और पली पूज्य भाभीमां विशाल गोयन्का परिवार में आकर दूध में मिश्री की भांति घुल-मिल गई और जल्दी ही परिवार के स्नेह-संबंधों को अपने जीवन का अंग बना लिया। स्वयं सदा संतुष्ट रहती हुई स्वजनों, परिजनों, नौकर-चाकरों को भलीभांति संतुष्ट रख कर, घर की सुख-शांति बनाए रखने में सफल हुई। दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति पर १९४७ में जब सारा परिवार पुनः बर्मा आकर बसा तब भाभीमां का उत्तरदायित्व और अधिक बढ़ गया। एक के बाद एक छह पुत्रों का जन्म हुआ। बच्चों का लालन-पालन, अपनी दोनों सास की सेवा, घर की सारी जिम्मेदारियों का दायित्व एक कुशल सद्गृहिणी के रूप में भलीभांति निभाती रही। हमारी पूज्य माताजी और ताइयों का गृही जीवन अत्यंत आदर्श था। भाभीमां ने उनसे प्रेरणा प्राप्त कर उनका अनुकरण किया।

रंगून में भैया सत्यनारायण का सामाजिक संपर्क बहुत विशद था। अपनी व्यापारिक जिम्मेदारियां निभाते हुए भी वे अनेक

सामाजिक संस्थाओं का संचालन करते थे। उनके अनेक बरमी और भारतीय मित्र थे। वे जब कभी रंगून आते तो घर की अतिथिशाला में ही ठहरते। इस प्रकार मेहमानों का आना-जाना लगा ही रहता था। पूज्य भाभीमां उन सबके निवास और भोजन आदि की सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखती थी। मेहमान नवाजी में कोई कसर नहीं रह पाती।

भाभी की सहनशक्ति सदा से बहुत प्रबल रही है। विपश्यना से पहले भैया का स्वभाव कभी-कभी बहुत उग्र हो जाता था। विशेष कर बच्चे जब स्कूल के परीक्षा फल का परिणाम-पत्र लाते, यद्यपि वे फेल नहीं होते थे पर बहुत अधिक नंबर नहीं प्राप्त करते। भैया हमेशा छोटी-बड़ी सभी परीक्षाओं में सर्वप्रथम आते थे। अतः वे बच्चों के नंबर कम देख कर उबल पड़ते थे। बच्चों की शामत आ जाती थी। कभी-कभी उन्हें बुरी तरह पीटते थे। एक बार एक बच्चे को इतना पीटा की उसका गाल सूज गया। आंखें भीतर धंस गयीं। आंख चली जाने का डर पैदा हो गया। दूसरे को एक बार एक हाथ व एक पांव पकड़ कर, पक्की सीढ़ियों के नीचे पक्के चबूतरे पर फेंक दिया। मां होने के नाते भाभीमां यह सब देख कर बहुत पीड़ित होती थी। पर मुँह से कभी एक शब्द भी नहीं निकालती थी। डर था कि कहीं और न भड़क जायँ। ताई मां कभी-कभी कह उठती कि बेटा! तेरे सिर पर कभी-कभी चंडाली चढ़ जाती है तब तुझे होश नहीं रहता। किस बेरहमी के साथ बच्चों को पीटते हो। कुछ समय बाद भैया को भी पश्चाताप होता पर जब वे क्रोध में आग बबूला हो जाते तो सचमुच अपना होश खो बैठते। भाभी चुपचाप सहन करती। भैया द्वारा विपश्यना किए जाने के बाद ही उसे इस पीड़ा से मुक्ति मिली।

एक और प्रसंग जिसके कारण भाभी को कभी-कभी मानसिक पीड़ा सहनी पड़ी थी। भैया नित्य प्रातः एकांत कमरे में बंद होकर आध घंटे तक ईश्वर की भक्ति में डूब जाते थे। गीताप्रेस के भक्तिमार्ग का उन पर बचपन से गहरा प्रभाव था। भावविभोर होकर वे अत्यंत धीमे स्वर में भक्ति के गीत गाते थे और आंसू बहाते थे। इस नियमित पूजन के बाद बाहर निकलते तो उनका चेहरा आसुंओं से गीला और आंखें लाल होतीं। एक बार पूजा से निकलने पर हमारी मां ने उसे बांह में भर लिया और पूछा कि बेटा, तुम्हें क्या दुःख है? भैया ने कहा मुझे कोई दुःख नहीं है। यह मेरा भक्तिभाव का पूजन है। यह रोज का कार्यक्रम था। घर के लोग समझने लगे थे पर कभी-कभी कोई नासमझी से कह देता कि यह अपनी पत्नी से खुश नहीं है इसलिए दुःखी है।

ऐसा लांछन लगाने का एक आधार भी था। सगाई के समय भाभी की उम्र कुल आठ वर्ष की थी और भैया की चौदह वर्ष की। वह समीप की बालिका पाठशाला में पढ़ने जाती थी। उसके पिता इस मामले में बहुत पुराने विचारों के थे। सगाई होते ही पढ़ाई बंद करवा दी। भैया को पता चला। उन्होंने और किसी से कुछ नहीं कहा, पर मांडले से अकेले साढ़े तीन सौ मील दूर मचीने जाकर बड़े भैया बालकृष्ण से इसकी शिकायत की। वे चाहते थे कि भाभी की पढ़ाई न रोकी जाय और यह भी चाहते थे कि उनका विवाह १८ वर्ष की उम्र के पहले न किया जाय। दोनों बड़े भाई बालकृष्ण और बाबूलाल का विवाह १४-१५ वर्ष की उम्र में हो गया था। उस समय के वहां के मारवाड़ी समाज में यही प्रथा प्रचलित थी। परंतु भैया पर आर्य समाज का गहरा प्रभाव था। इस कारण वे नारी-शिक्षा के प्रबल समर्थक थे और बालविवाह के कट्टर विरोधी। बड़े भैया बालकृष्ण उन्हें साथ लेकर मचीने से मांडले आए। उन्होंने बालचंदजी से बातचीत की, पर वे अपनी बेटी को पाठशाला भेजने के लिए किसी हालत में तैयार नहीं हुए। घर पर ही पढ़ाने की सहमति प्रकट की। इसी से आगे चल कर किसी ने अंदाज लगाया कि भैया भाभी से नाखुश हैं। परंतु ऐसा बिल्कुल नहीं था। भाभी खूब जानती थी फिर भी उसे यदा-कदा ऐसी निराधार टिप्पणी सुननी पड़ती थी, जिसे वह मौन रह कर सह लेती थी।

एक व्याकुलता की घड़ी तब उपस्थित हुई थी जबकि भैया दस दिन के लिए विपश्यना के शिविर में सम्मिलित होने के लिए गए। मैंने अपनी माताजी से कभी सुना था कि एक बार पूज्य पिताजी और माताजी अपने दो पुत्रों भाई बाबूलाल और पू. गुरुजी को लेकर अपने पुरुखों की जन्मस्थली चूरू गांव की हवेली में रहने के लिए आए थे। मां अपने गृहकार्य में व्यस्त थी और दोनों पुत्र हवेली की चौखट पर खेल रहे थे। उस समय एक प्रसिद्ध संन्यासी ने दरवाजे पर आकर आवाज लगायी –"भिक्षाम देहि"। माताजी पात्र में भिक्षा लेकर हवेली के बाहर आयी। संत को भिक्षा देकर जाने लगी तो संन्यासी ने पूछ लिया –माई ये कि सके बच्चे हैं? मां ने सहजभाव से कहा, महाराज! ये दोनों मेरे पुत्र हैं। उसने गुरुजी की ओर इशारा करते हुए कहा, माई तेरा यह पुत्र आगे जाकर विश्व कल्याण करेगा। इसे मुझे सौंप दे। मैं इसे सुयोग्य पात्र बना दूंगा। मां डर गई और अपने दोनों पुत्रों को आंचल में छुपा कर अंदर चली गयी। कालांतर में ऐसी ही भविष्यवाणियां औरों ने भी की। इसके कारण भाभी और हमारी मां को यह चिंता होनी स्वाभाविक थी कि कहीं यह साधना से प्रभावित होकर गृहत्यागी भिक्षु न हो जाय। यद्यपि हमारे गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन स्वयं गृहस्थ थे, भिक्षु नहीं थे। फिर भी चिंता थी। परंतु दस दिन के बाद स्वस्थ होकर घर लौटने पर सब के साथ भाभीमां को भी बड़ी खुशी हुई। माइग्रेन का सिरदर्द दूर हुआ, परंतु इससे बड़ी बात यह हुई कि भैया ने फिर कभी बच्चों पर हाथ नहीं उठाया।

ऐसा ही एक और प्रसंग उपस्थित हुआ। जून १९६९ में भैया को बरमी सरकार ने भारत जाने की स्वीकृति दी और भारत सरकार ने उन्हें तीन महीने का वीसा दिया। उन दिनों बर्मा की स्थिति ऐसी थी कि यदि कोई भारतीय मूल का बरमी नागरिक किसी भी बहाने से बर्मा के बाहर जा पाता तो पुनः लौट कर नहीं आता। अतः यह आशंका होनी स्वाभाविक थी कि भैया अब बर्मा लौट कर नहीं आयेंगे। और क्योंकि भाभी किन्हीं कारणों से भारत जा नहीं सकती थी, अतः यह चिंता का विषय बना कि कहीं दोनों बिछुड़ न जायें। भैया ने उसे आश्वासन दिया कि ऐसा नहीं होगा। अपनी रुग्ण माता को विपश्यना के एक-दो शिविर देकर वे तीन महीने के भीतर वापस लौट आयेंगे। यद्यपि गुरुदेव ऊ बा खिन का कहना था कि भारत में शिविर लगने लगेंगे और भारत इस विद्या को सहर्ष स्वीकार करेगा। फिर भी भैया इस विषय में पूर्णतया आश्वस्त नहीं थे।

वैसे भैया यह कभी नहीं चाहते थे कि बर्मा में पीढ़ियों से बसने वाले भारतीय बदली हुई स्थिति में बर्मा छोड़ कर भारत चले जायँ। उन्हीं दिनों उन्होंने बर्मा की जियावाड़ी नगरी में वहां के भारतीय किसानों की एक बड़ी सभा में लोगों को इस बात की प्रेरणा देते हुए अपनी एक कविता सुनाई थी। इसके प्रारंभिक बोल थे –

मेरे देश में जो भी होगा सहूंगा,
यहीं पर जिया हूं, यहीं पर मरूंगा।

ऐसी मनोदशा के कारण वे यह सोच भी नहीं सकते थे कि अपनी जन्मभूमि छोड़ कर वे स्वयं भारत में जा बसेंगे। इसीलिए उन्होंने भाभीमां को लौट आने का पूर्ण आश्वासन दिया। परंतु संयोग ऐसा हुआ कि अत्यंत अप्रत्याशित ढंग से एक के बाद एक विपश्यना के शिविरों का तांता लग गया। बड़े गुरुदेव का आग्रह था कि वे शिविर लगाते रहें। वापस लौट आने पर उन्हें पुनः बर्मा से बाहर निकलने का पासपोर्ट मिले या न भी मिले। परम पूज्य बड़े गुरुदेव भाभीमां को आश्वासन देते रहे कि शीघ्र ही ऐसी परिस्थितियां आयेंगी कि वह भी भारत जा सकेगी और अपने पति के साथ उस महान धार्मिक कार्य में उसका साथ दे सकेगी। परंतु ऐसा लगभग अढ़ाई वर्ष बाद ही हो सका। तब तक उसके मानस में चिंता तो बनी रही परंतु उसने इसे धर्मधैर्य से सहन किया। भारत आकर वह भी अपने पति के साथ धर्मसेवा में लग गयी।

घर में आज्ञाकारी पुत्र हैं, पुत्र-बधुएं हैं, पौत्र हैं, पौत्रियां हैं। इस भरे-पुरे परिवार में रहने का आकर्षण स्वाभाविक है, लेकिन फिर भी वह लंबे समय तक परिवार से दूर धर्मसेवा में लगी रहती है। हजारों साधक-साधिकाओंके प्रति उसके मन में अपार वात्सल्यभाव उमड़ता है। उन्हें वह मंगल मैत्री प्रदान करती है। हर स्थिति में पति का साथ देना वह अपना धर्म समझती है और उसे प्रसन्नतापूर्वक निभाती है।

प्रारंभिक वर्षों में विपश्यना केंद्र नहीं बने थे। तब निवास आदि की कठिनाइयों का सामना करते हुए पूज्य गुरुजी भैया सत्यनारायण मंदिर, मस्जिद, चर्च तथा सार्वजनीन धर्मशालाओं आदि में शिविर लगाते थे। भाभी भी उनका साथ देती थी। साधकों को गुरुजी ध्यान विधि सिखाते, पूज्य भाभीमां साथ में बैठी उन्हें मैत्री देती रहती। पूज्य भाभीमां साधना की जिस ऊंचाई पर पहुँची हुई है, इससे साधना का स्थान उनकी धर्ममयी मैत्री की पावन तरंगों से परिप्लावित हो जाता है। यह सिलसिला आज तक चला आ रहा है। गुरुजी का जहां कहीं भी धर्मोपदेश चलता है, पूज्य भाभीमां की मौन मैत्री की तरंगों से वह स्थान तरंगित होते रहता है। साधकोंको इसका अनमोल लाभ मिलता है। उनकी यह सेवा शुद्ध धर्म प्रचार में बहुत सहायक होती है। पूज्य भाभीमां बहुत कम बोलती है। अपनी ऊर्जा का प्रयोग मंगल मैत्री प्रसारित करने में लगाती है। वह जब भी शिविरों से घर आती है तो वहां रहते हुए भी वह जल में कमल की तरह निर्लिप्त, निर्विकार रहती है। उन्होंने मन को मैत्री, करुणा, मुदिता के भावों से रंग लिया है। उनकी कोख से जन्मे ६ पुत्र ही नहीं, विश्व के सारे विपश्यी साधक एवं साधिकाएं उनकी संतान हैं। भाभीमां उनको अपने पुत्र-पुत्रियों की तरह आशीर्वाद देती है, हृदय से प्यार देती है, मैत्री देती है। सारे साधक-साधिकाएंभी उन्हें अपनी माताजी मानते हैं, सम्मान देते हैं, मैत्री का लाभ लेते हैं। उन्हें पद प्रतिष्ठा, मान-सम्मान और यश की कोई कामना नहीं है। धर्म सेवा ही उनके जीवन का अंग बन गया है। पकी उम्र में भी रात दिन अपना अधिष्ठान पूरा करने में लगी रहती है।

भाभीमां साधकोंके मन में धर्म की ज्योति जगाती रहती है। भारत की वसुंधरा ने अपने इस जगमगाते दम्पत्ति रत्न से सारे विश्व को पुनः प्रकाशमान किया है। भारत एक बार फिर विश्वगुरु के पद पर सुशोभित हो रहा है।

धन्य है ब्रह्मदेश की स्वर्णभूमि जहां पूज्य गुरुजी और पूज्या माताजी का जन्म हुआ। धन्य हैं वे जननी-जनक जिनके यहां इन जैसे अनमोल रत्न का आविर्भाव हुआ। मानवजाति के इतिहास में ऐसे सत्पुरुष गिने-चुने ही आते हैं। भारत के इस जगमगाते सितारे ने सारे विश्व को प्रकाशमान करने में अपना सारा जीवन लगा दिया है। पूज्य गुरुजी और पू. भाभीमां के हृदय में विश्व के सभी प्राणियों के प्रति असीम करुणा और प्यार है। दोनों का जीवन खुली किताब की तरह है जिनकी कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं है। दोनों के मुँह से निकले शब्द चिड़िया के चुग्गे की तरह चुन-चुन कर ग्रहण करने योग्य हैं। इनके धर्मपूर्ण शब्दों का प्रभाव सदियों तक लोगों का मार्गदर्शन करता रहेगा। सचमुच धर्म बड़ा ही कल्याणकारी है और ऐसे संत पुरुषों की उपस्थिति में और भी अधिक सुख-शांति प्रदायक बन गया है। ऐसे संत पुरुषों की छत्रछाया और मार्गदर्शन सचमुच अपने संचित पुण्य कर्मों से ही प्राप्त होता है।

विगत वर्षों में पूज्य गुरुजी और भाभीमां के स्पर्श से कल्याणकारी विपश्यना साधना सब के लिए संजीवनी बूटी बन गयी है और मानव जीवन को सफल बनाने की प्रेरणा दे रही है। संसार में ऐसे संत पुरुष यदा-कदा ही उत्पन्न होते हैं और वे सामान्य स्तर से भिन्न जीवन जीते हैं। इन दोनों का धर्ममय जीवन निर्मल जल के समान पवित्र है।

मान्यता है कि सदियों पहले महामना भागीरथ ने हिमालय की कंदराओंसे पवित्र निर्मल गंगाजल इस धरती पर लाकर जनकल्याण किया था। सदियों से अपने शुद्ध रूप में संभाल कर रखी हुई अनमोल चित्तविशोधनी धर्मगंगा को पूज्य गुरुजी और माताजी ने ब्रह्मदेश से भारत लाकर इसे विश्व में प्रवाहित करते हुए महानतम जनकल्याण किया है। इस अनमोल विद्या को पाकर हम सभी भाई-बहन ही नहीं पूरा विश्व उनका चिर ऋणी हो गया है। उनके ऋण से मुक्ति पाने के लिए इस मुक्तिदायिनी पवित्र भागीरथी को इसके मूल स्वरूप में शुद्ध बनाए रखना है। इसी में हम सभी का कल्याण समाया हुआ है।

मेरी भी अतीत की पुण्यपारमी रही होगी। इसी कारण पूज्य भैया और भाभीमां के सान्निध्य में रहने का सौभाग्य मिलता रहा। इनका सान्निध्य अत्यंत ज्ञानवर्धक है और तन-मन को प्रफुल्लित कर शांतिदायक भी।

परम पूज्य गुरुजी तथा भाभीमां को सादर चरण वंदन!

इलायचीदेवी अग्रवाल

स्कूल और कालेज-शिक्षकों के लिए १५ दिवसीय निवासीय कार्यशाला

विश्व भर के शिक्षाविदों का मानना है कि आधुनिक शिक्षा-प्रणाली इसके मूलभूत उद्देश्यों अर्थात् चरित्रनिर्माण संबंधी नैतिक मूल्यों को जीवन में उतारने में असफल रही है। भारत सरकार के मानव संसाधन विकास विभाग में इस दिशा में कई ठोस कदम उठाए गए हैं जिनमें शैक्षणिक संस्थाओं को योग्य कार्यक्रम शुरू करने को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

"विपश्यना साधना" स्वनिरीक्षण द्वारा चित्तशुद्धि की वैज्ञानिक विधि है, चरित्रनिर्माण के लिए यह अत्यंत उपयुक्त है। साम्प्रदायिकतावीहीन और आशुफलदायिनी है। गत वर्ष भी ऐसी कार्यशाला का आयोजन किया गया था जो कि अत्यंत सफल रहा।

इसलिए इस वर्ष भी ८ जून की प्रातः १० बजे से २२ जून की सायं ५ बजे तक, **लाजिक स्टेट फार्म,** छत्तरपुर मंदिर रोड, गांव- भाटी, राधास्वामी सत्संग फेस ४ के सामने, नई दिल्ली-११००३०. फोनः ६६५३१७८. (बस नं. ५२३, कुतुब मीनार से उपलब्ध) पर आयोजित किया जा रहा है।

यह कार्यशाला नैतिक शिक्षा संबंधी मूलभूत विषयों पर चर्चासत्र से आरंभ होगी। इसके बाद ८ जून की सायं से दस दिवसीय विपश्यना शिविर होगा और १९ से २२ जून तक वैयक्तिक अभ्यास को जीवन में उतारने संबंधी चर्चा होगी और बच्चों का शिविर, धर्मसेवा और सामूहिक साधना आदि के व्यावहारिक अभ्यास को चरितार्थ किया जायगा।

इसके साथ ही विपश्यना के **सहायक आचार्यों** के लिए एक **कार्यशाला** आयोजित की गयी है जो कि १९ से २३ जून तक चलेगी।

नूतन वर्षाभिनंदन

हर वर्ष की तरह अनेक साधकों की ओर से दीपावली एवं नव वर्ष के अभिनंदन-पत्र मिले हैं। एक-एक को नव वर्ष की मंगल कामना प्रेषित कर पाने का अवसर नहीं मिल पाया, इसलिए 'विपश्यना' पत्रिका के माध्यम से उन्हें तथा अन्य सभी साधक-साधिकाओं को मेरी असीम मंगल मैत्री पहुँचे! नव वर्ष सब के मानस में धर्म की नवज्योत प्रज्वलित करे! दिनोंदिन प्रज्ञा पुष्टतर होती जाय! धर्म धारण करने का मंगलकारी फल प्रभूत हो! प्रभावशाली हो! सब का मंगल हो!

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

दोहे धर्म के

अपना भी पालन करे, पाले निज परिवार।
औरों का पालन करे, गृही धर्म का सार॥

अर्जित सम्पति का सदा, समुचित हो उपयोग।
तो गृहणी का सुख बढ़े, बढ़े नहीं भवरोग॥

रहें भृत्य संतुष्ट सब, हो संतों का मान।
ऐसे सुखी गृहस्थ का, घर हो स्वर्ग समान॥

जहां शांति समता रहे, बोधि शक्ति उद्योग।
वहां सदा मंगल बसे, सुख का ही संयोग॥

जीवन प्रफुल्लित रहे, सदा बसंत बहार।
शील स्नेह से जब भरे, सद्गृहस्थ परिवार॥

धर्मविहारी पुरुष हो, धर्मचारिणी नार।
धर्मवंत संतान हो, सुखी रहे परिवार॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
टे. ४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२.
टे. -४८६१९०, • दिल्ली- २९११९८५,• पटना- ६७१४४२, • वाराणसी- ३५२३३१,
• बैंगलोर- २२१५३८९,• चेन्नई- ४९८२३१५, • कलकत्ता- २४३४८७४
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

चित रो मैल उतार ले, जो चावै चित चैन।
मैल रह्यां दुख ही रवै, बौद्ध हुवै या जैन॥

मैलो मन एकाग्र कर, सोध सकै तो सोध।
मैलै मन दुखियो रवै, विकल असांत अबोध॥

मन मँह छुरी कटारियां, ऊपर मीठा बोल।
खुलसी एक न एक दिन, ढोल मांयली पोल॥

अपणै मन रो द्वेस ही, अपणै मन रो क्लेस।
अपणो मन दुरमन हुयां, हुवै सांति सुख सेस॥

दया बणाल्यां द्वेस नै, करुणा करल्यां क्रोध।
राग बदळल्यां त्याग स्यूं, तो ही चित्त विसोध॥

कूड़-कपट जाणै नहीं, क्रोध न फटकै पास।
उण मिनखां रै अंग मँह, करै देवता वास॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ -४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
टे. ०२२- २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ४४०८६, ४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४५, पौष पूर्णिमा, २८ जनवरी, २००२**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. २५०/-, " US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.** Regn. No. AR/NSK-46/2002

Licenced to post w**ithout Prepayment of postage** -- Licence number-- **AR/NSK-WP/3**
Posting day- Purnima of Every Month, Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) ४४०७६
फैक्स : (०२५५३) ४४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
e-mail: <yadavdg@sancharnet.in>
e-mail: dhamma@vsnl.com (for booking)